International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 4, Issue 5, Sep.-Oct., 2024, pp: 900-904 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

श्रीनरेश मेहता के काल्य में भारतीय तथा पाश्चात्य दार्शनिक चेतना

डॉ.सरूप रानी
असिस्टैंट प्रोफेसर, हिन्दी.विभाग,
संत हरि सिंह मैमोयिल कालेज फार विमैन,
चेला–मखसूसपुर, होशियारपुर
पंजाब।

Date of Submission: 12-10-2024 Date of Acceptance: 26-10-2024

दर्शन का अर्थ तथा स्वरूपः– भारतीय जीवन, दर्शन की भूमिका के अनुरूप ढला है, भारतीय चिन्तनों ने जीवन की महान् उद्देश्यों का उद्घाटन किया है। जीवन चार पुरूषार्थो से होकर गुजरता है, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। धर्म जीवन को दिया देने के लिए उसे प्रेरित करने के साथ.साथ धारण कटने से जीवन की भी सार्थक, दृष्टि मिलती है। अर्थ का प्रयोजन भौतिक सम्यन्नता है, बिना अर्थ के जीवन समाजिक दौड़ में पीछे रह जाएगा। अर्थ को सही उपायों से अजिवि मट तथा उसका विकास जीवन के लिए महत्वपूर्ण है। कान जीवन मान्तीय जीवन के विराम और गति पट के लिए महत्वपूर्ण है, प्रेम, क्षृगह परिणाम, वात्सल्य, स्नेह इसी काम मे अन्तर्गत आते है। मोझ से आराप जन्म–भरन के चक्र से छुटकारा अपना सांसारिक ट्टबहानों से मुक्त होना ही मोक्ष है।

भारतीय दार्शनिक आचायों ने जीव, जगत, माया, बुझ, ईश्वर, आत्मा–परमात्मा आदि के संदर्भ में गहन चिन्तन किया है। जीव कहा से आया है, कमौं का बन्धन का क्या है? इस संसार की उत्पति क्या किस निमत्र तक, ईश्वरीय सता क्या है? इन सब के बारे में गहरे चिन्तन, उनुभव भारतीय साहित्य, सामति को मिलते है।

मेहता के काव्य में दारानिम चिन्तनः– कपि मेहता ब्राहमण वशं में उत्पन तथा वैस्णव संस्कारों के बीच पले बढे। बचपन की एकान्त प्रिपता ने उनमे मन पट गहरा प्रभाव डाला। जिसके फलस्वरूप उनके काव्य की पृष्भूमि प्रकृति है। वैचानिक रक्षर पर के काव्य को देखे तो भारतीय दर्शन सहन और बोधगग्य स्पष्ट दिखाई देता है। वैदिक आर्यो पर विश्वास करते हुए प्रकृति के माध्यम से कवि ने परमसता को स्वीकार किया है एवं उसने प्रति जिज्ञाना भाव पदा कहा देखने को मिलता है।

दार्शनिक चेतना के अन्तर्गत 'ब्रहमाृ शब्द हमारे वेद, प्राणों में मिलता है। ब्रझा के बारे में लिखा है, "जिससे इस संसार का उद्भव, स्थिति और सँहार होता है उसकी संज्ञा ब्रहम है। वहीं शस्त्र भी योनि है ज्ञान का स्त्रोन है। श्वेताम्बर, उपनिषद में इसी ब्रझ को ईश्वरों का ईश्वर अर्थान् महेश्वर और देवताओं का देवता महादेव कहा क्या है। यह परात्पर तत्व सबका मूल है। यहां जो कुछ है इसी ब्रझ से निमला है और अन्त में इसी माँ लीन हो जाएगा। कर्मकाण्डी इसे परमात्मा कहते हैं। भक्त और उपासक इसे भगवान कहते हैं और इसे दारानिक ब्रझ की संज्ञा देते हैं।1 आत्मा का उस परमात्मा से मिलन तभी संभव है जब मानव इन संसारिक बंधनों से मुक्त होमट उस परमात्मा का ध्यान एमागु मन से करे। कवि अपने मन के भाव कविता 'तीर्थ जलृ में व्यों व्यम्व करता हैः–

'भटक गयी जलधारा–/ बन्द पाखी–सा एमामीपन

घायल स्वर में शतः निनादित–/ हमें शेष से जोड़ों/जोड़ो/जोड़ो।
समिधा–1, प्र.47–48.

जो ब्रझा समात पृथ्वी से ऊपर है जिसमा मान पूरी मृष्टि कर रही है, वह ईश्वरत्व वास्तव में मनुष्य के देवत्व मे ही सिद्ध घेमा।

नरेश नेहता के शब्दों मेंः– दिन मनुष्य सूर्य बनेगा/क्योंकि वह आकाश में पृथ्वी का और पृथ्वी पर आकाश का प्रतिनिधि होगा/ मनुष्य के इस देवत्व मे माध्यम से ही यह सम्पूर्ण पृष्टि ईश्वत्व प्राप्त करेगी/मनुष्य का अभिषेक देव का ही नहीं ईश्वरत्व का भी अभिषेक है
इसीलिए होने दो अभिषेक। मनुष्य मात्र का होने का दो अभिषेक
समिधा–1, प्र.224–225.

कवि आकाश की तुलना ब्रझ से करता है। वह मानता हैं कि ईश्वर की लीला आकाश के सामान अनन्त है। ब्रझ का स्वरूप उतना ही व्यापक है जितना इसके बारे में ऋषियों ने बताया हैः.

'यह नभ भी तो ऋषि ही है।/नक्षत्र–मन्त्र जो लिखता

प्रभु के रहस्य.सा क्या नभ/इतना ही जितना दीखता है।'
समिधा–1, प्र.497.

समान सृष्टि में प्रभू ही विद्यमान हैं। हमारा भूतकाल, वर्तमान और भविषय सब में प्रभू ही है, नदिया जो बहती हैं, ऊँचे–ऊँचे शिखर हैं, सब में प्रभू ही निवास करता है। मेहता मे शब्दों मेंः–

'बीत गया है जो वह प्रभु था/और भविषय भी प्रभू है
नदियों में प्रतिक्षण चहता/और अडिग शिखर भी प्रभु ही है।
इसी प्रकार.वह सत्ता है, नाम–रूप धर/कर आती इस जग मैं।'
समिधा–1, प्र.506.

ईश्वर के विभिन्न स्वरूपों को त्पकव करता हुआ कवि महता हैः.

'यह कैसा लीला–भाव कि/अग्नि ही अग्नि में
अग्नि का होम कर रही है।
समिधा–1, प्र.214.

प्रभु एक है, उसकी प्राटिल के मार्ग अलग.अलग हैं लेकिन मन्तव्य सबका एक है. प्रभु को प्राप्त करना मेहता करहे हैंः–

शक्ति एक है मार्ग से/चलो, वहीं पहुंचोगे। समिधा–2, प्र.506.

जीवः– जीव ब्रहम है, ब्रहम, जगत और जीव दोनों रूपों मेंभिन्न प्रकार से उद्भासित है। जीव जब मुम्त होमट पटम सत्ता में विलीन हो जाता है तो उस जगत से न तो कोई नाता होता है और न ही उसमें जगत् की कोई सत्ता होती ह जगत् से विमुख होकर जीव यह जान लेता है कि ब्रहम ही सत्य है तथा वही जगत के सभी लोकों से सम्बन्धित है। जीव की सत्ता जगत् की सत्ता से सर्वथा भिन्न हैं। जीव के सम्बन्ध में लिखा गया है कि, 'जीव जब तक बुद्धि रूप उपाधि से युक्त है तभी तक जीव है। वस्तुतः इस उपाधि के होने वाले भ्रम को छोड़कर जीव की दशा कुछ और है ही नहीं। जीव शिव से भिन्न नहीं है।

उसकी सर्वज्ञता और सर्वशम्तिमता इससे इसीलिए छिपी हुई है कि इसने देहेन्द्यिों के मिटपा तादात्म्य का आरोप किया है।2

नरेश मेहता ने जीव के अन्तर्गत अपने विचारों को उद्घाटित किया है। वे मानते हैं कि बुद्धि श्रेष्ठ है और एममात्र सत्य है। उस संदर्भ में यह उदाहरण देखिएः.

'प्रज्ञा ही एक मात्र दक्षिणा है पार्थ/जोकि इस सन्तप्त मानवता को उसके इस स्वाहात्व के लिए/तुम दे समते हो/ ऐसा सत्य
समिधा–2, प्र.330.

जीवात्मा उस परमसत्ता परमात्मा से बिछुड़ गई है और उसी में विलीम होने के लिए तत्पर है। आत्मा का परमात्मा से मिलना ही मुक्ति है, मोक्ष है। 'शबरीष खण्ड–काव्य में शबरी इसी जीवात्मा की स्थिति को व्यक्त कर रही हैः–

'तेरी विशाल रचना में/ मैं घास–पात ही केवल
शबरी का तो है तू ही/ आराध्य और बस तप–बल।
समिधा–2, प्र.497.

जगत भी ब्रहम का ही स्वरुप है। जगत ब्रहम में उसी प्रकार विलीन है जैसे घड़ा मिट्टी का होता है, मिट्टी का कार्य खत्म होने पर भी घड़ा उससे प्रथम नहीं हो पाता, क्योंकि वह मिट्टी से ही निर्मित है। मिट्टी से अलग घड़े क कोई स्वरूप नहीं हैप उसी प्रकार जगत् भी ब्रहम ही है। ब्रहम से अलग जगत् का भी कोई अस्तित्व नहीं है। नरेश मेहता ने जगत को अपने काव्य में उद्घारित किया है। वे कहते हैं कि आदमी को एक बार जिस वस्तु से लगाव हो जाता है, वह उसे भूला नहीं पाता। स्मृतियां इन्सान का कभी पीछा नहीं छोड़ती, अन्तर्यात्रा चलती ही रहती है। इस सबका निदान एकमात्र धर्म है। इन भावों को कवि ने बड़े ही मार्मिक ढंग से अन्मिव्यक्त किया हैः–

'स्मृतियां/फिर प्रतिक्षण इनकी आवृतियां–
कुछ भी तो बीत नहीं पाता है पार्थ।
व्यक्ति के मन से/जो कुछ भी अंकित या इत्मीर्णित होता एक बार/तब कैसी ही करूणा, उदारता, क्षमा आदि का /मक्षज्वार।'
समिधा–2, प्र.287–288.

कवि ने माया के स्वरूप को भी अपने काव्य में जगह दी है। धर्म गुन्थों में माया को महाठगिनी कहा है और इस माया के अस्तित्व को भी मानना पड़ता है। कवि माया अनके रूपों में सबको अपनी ओर आकर्षित करती है और इस माया के

'उस पूर्ण पुरुष के लिए/सभी कुछ लीला था–
वह विराट का दर्शन/गीता का उपदेश कथन
यमुना–पुलिनों का रस–नर्तन/या व्याध.बाण में अनुत्सवी वह आत्मरण
सब लीला था। उस पार्थ सारथी के निमट/सभी कुछ माया था।'
समिधा–2, प्र.282.

भारतीय चिन्तन परम्परा में मानव के निर्णयक तत्वों में नियति भी सम्मिलित है। नियति का एक अर्थ है निश्चित, दूसरा 'भाग्य' या 'प्रारब्ध'। ये दोनों मनुष्य के वश से बाहर हैं, जो मनुष्य को मिलना है या मिलता है वह उसका भाग्य या प्रारब्ध है। कई बार मनुष्य के कर्म करने पर भी उसे अनुकूल फल की प्राप्ति नहीं होती और कई बार कुछ न करने पर भी उसे इतना मिल जाता है कि आश्चर्य होता है। नरेश मेहता के काव्य में अनेक जगह भाग्य भी विवेचना हुई है। 'प्रवाद पर्वष खण्ड.काव्य में कवि कहता है कि मनुष्य कर्म करता चला जाए, यही उसका भाग्य हैः–

'क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध? कि/कर्म/निर्मम कर्म
केवल असंग कर्म करता ही चला जाए?/ भले ही वह कर्म धारदार अस्त की भांति/न केवल देर/बल्कि/उसके व्यक्तित्व को रागात्मिकताओं को भी काट कर रख दें।

समिधा–2, प्र.357.

नरेश मेहता ने मनुष्य की पहुंच, उसकी प्राप्ति से परे जो कुछ है उसे नियति ही माना है। उनका कहना है कि:–

'कैसा है यह/सृष्टि का रहस्य/कैसी है यह/आदिम जिज्ञामा वाली अग्नि.परीक्षा जो मनुष्य मात्र की नियति है।'

समिधा–2, प्र.359.

इस संसार में जन्म लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति का अपना भाग्य है। संसार में जैसे किसी का भी स्वभाव एक दूसरे से नहीं मिलता वैसे ही भाग्य भी नहीं मिलते। भाग्य में जो भी लिखा हो, अच्छा या बुरा उसे भोगना ही पड़ता है।

सीताः क्या सबकी/अपनी.अपनी नियति नहीं होती।
रामः होती है/और उसे हमें भोगना भी है सीता।
वमों में/एकान्त उत्पत्याकाओं में
वानरों राक्षसों के बीच/उस नियति को/संभाव्य.असंभाव्य
किस.किस रूप में नहीं भोगा है प्रिये?
तभी तो मैं चिन्तित हूं कि/यह कैसा विधान है।'

समिधा–2, प्र.382.

राम भाग्य को नियति को मानते हैं लेकिन वहीं लक्ष्मण इसका विरोध करते हुए कहते हैं:.

'नहीं हैं हम/केवल परिचालित यंत्र मात्र/किसी अदृश्य/अंधे हाथों के

समिधा–2, प्र.198.

लक्ष्मण राम के माथे पर चिन्ता की लकीरे नहीं देखना चाहते और अगर कोई राम को कष्ट देने की सोचता है तो लक्ष्मण विरोध करेंगे। फिर चाहे वो ब्रझ ही क्यों न हो:.

'ब्रझालेख को भी मैं/वाणी की चुनौती ही देता
यदि वह/राम के माथे पर बनता/चिन्ता की रेखा।'

समिधा–2, प्र.202.

राम अपनी व्यक्तिगत त्रासदी एवं संशप की चर्चा अपनी मृतात्मा पिता से करते हुए कहते हैं:.

क्या यही नियति है।/सारे मानवीय शुभाशुभ की क्या यही परिणति है।

समिधा–2, प्र.223.

राम अपनी व्यक्तिगत त्रासदी एवं संशप की चर्चा अपनी मृतात्मा पिता से करते हुए कहते हैं:.

'क्या यही नियति है।/सारे मानवीय शुभारभ की
क्या यही परिणति है।'

समिधा–2, प्र.223.

'महाप्रस्थान' खण्ड–काव्य में युधिष्ठिक हिमालय यात्रा को अपना प्रारब्ध मानते हैं। वे कहते हैं:–

'अभी और कितनी बाकी हैं/पंच पाण्डवों के ललाट में परिकमाएं पूरी पृथ्वी–प्रदक्षिणा करवा कर भी
किस ध्रुव जैसे निर्जन प्रदेश में ले आघी तुम।'

समिधा–2, प्र.269.

'शब्री' खण्ड–काव्य में शबरी अपने वर्तमान जीवन को अपना भाग्य मानती हैं:.

'मैं गरूड़ नहीं, न हंसी/जो लांघ दुरिया जाऊं
प्रारब्ध नहीं है इतना/जो यज्ञ–याग कर पाऊं।।

समिधा–2, प्र.497.

मोक्ष को मुक्ति भी कहा गया है। जब जीव 84 लाख योनियों से मुक्त होकर ब्रहम में लीन हो जाता है उसे मुक्ति की प्राप्ति कहा जाता है, आचार्य शंकर ने इसे जीव मुक्ति कहा है। मेहता ने अपने खण्ड–काव्य 'शब्री; में ब्रहम्–साक्षात्कार की चरम परिणति का वर्णन किया है। प्रस्तुत पंक्तियां दृष्टत्यहैः–

'मैं तो आया हूं केवल/करने जयकार सती का
मैं हुं कृतार्थ–पाकर यह/स्वागत–सत्कार सती का।'

काल ओर देश की सीमाओं को त्यागकर उस परमसत्ता, अनतं ब्रहम् में लीन होने की वृत्ति पलायन है, मुक्ति है। कवि ने महाप्रस्थान' में पलायन वृत्ति को दृष्टिगत किया है। युधिष्टिर द्रौपदी से कहते हैं:.

'एक और ऊँचाई होती है कृष्णा!/जहां यह तन भी
वृक्षछाल–सा उतार देना पड़ता है।/धूमवस्त्रों का परित्याग कर ताम्रवर्णी अग्नि/जैसे आकाश में यज्ञ वहन करती है वैसे ही मन/संबंधहीन, अबाध यात्रित हो। धर्म वहन करता है।

समिधा–2, प्र.296–297.

प्रत्येक युग का कवि किसी–न–किसी विचारधारा से किसी मानव श्रेष्ठ से प्रेरणा प्राप्त कर अपने जीवन तथा अपने काव्य में उतारता है। नरेश मेहता भारतीय दर्शन शास्त्र के साथ.साथ पाश्चात्य दर्शन से भी प्रेरणा पाते रहे। उसे काव्य में प्रतिफलित पाश्चात्य दर्शन निम्न अनुसार है:–

अस्तित्ववादः– आधुनिक युग का सर्वाधिक प्रतिष्ठित मत अस्तित्ववाद है। अस्तित्ववाद का केन्द्र जीवन के प्रति वैयक्तिक दृष्टि की प्रधानता है। मनुष्य का जीवन वैज्ञानिक चिन्तन एवं जीवन की जटिलता में जकड़ा हुआ है। अस्तित्ववाद मानता है कि, "मानवता पर आए इस आसन्त संकट के कारण अनिवार्य हो गया है कि मानव को पुनः उसके प्राकृतिक आन्तरिक स्वरूप से ऊर्ध्वमुखी चेतना का आधार प्रदान किया जाए और उसके अस्तित्व को आन्तरिक गरिमा का सबल और बौद्धिक सम्बल दिया जाए जिससे वह सम्पूर्ण मानव बन

सके।3 बीसवीं शताब्दी के प्रमुख अस्तित्ववादी विचारकों में कीर्कठगार्ड, नीशे, कार्ल, यास्पर्स, पाल सार्त्र, अलवेयर कामू, दास्तावोस्की अदि प्रमुख हैं।

मेहता ने आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में अपने प्रबन्ध काव्यों के पात्तों का निर्माण अस्तित्ववादी दर्शन एवं मनोविश्लेषण के आधार पर किया है। 'संशय की एक रात' में कवि ने अस्तित्ववादी चेतना को प्रकट किया है। राम समुद्र तट पर टहल रहे हैं और संशप से गुप्त हैं कि वे युद्ध करें या नहीं। संशप के कारण के संदर्भ में/आयोजना में/लक्ष्मण! शव चुभे बाण के टूटे फलक के/अधिक अपनी सार्थकता/क्या हैं?

समिधा–2, प्र.185.

राम युद्ध का विरोध करते हैं और वे मानते हैं कि युद्ध के उपरान्त भी शान्ति नहीं होगी। वे मानते हैं कि–

'एम/अनुत्तरित संशप का सर्पवृक्ष/हरहरा रहा मुझमें पीपल–सा/अहोरात्र।'

समिधा–2, प्र.210.

राम युद्ध को अपनी व्यक्तिगत समस्या मानते हैं, इसका कारण उनका खण्डित व्यम्तित्व है। वे लक्ष्मण से कहते हैंः–

व्यक्तिगत मेरी समस्याएं/क्यों ऐतिहासिक कारणों को जन्म दें।

समिधा–2, प्र.296–205.

राम को कोई भी इस संशप की परिस्थिति से निकाल नहीं पाता है। उनकी परिस्थिति ज्यों की त्यों बनी रहती हैं। ये परिस्थितियां उनके विभाजित व्यक्तित्व की परिगति हैंः–

'मैं सत्य चाहता हूं/युद्ध से नहीं/खड़ग से नहीं, मानव से मानव का सत्य चाहता हूं/म्या यह संभव है/क्या यह नही है।'

समिधा–2, प्र.211.

फ्रापडवादः– व्यक्ति के जीवन में शुद्धतावाद प्रायः किसी पूर्ण नैतिक अपराध की चेतन या अवेतन अवस्था या उसके निमित्र प्रायश्चित का छोतम है। प्रायश्चित के अपने विधान हैं और उनमें मे एम है आत्मयीउन। मेहता का काव्य आत्मपीड़न से युक्त है, "नैतिक आत्मयीडन अपराध भावना के बोध से व्यक्त होता है। अकारण ही अपने को ही अपराधी मानकर व्यक्ति आत्मग्लानि से पीड़ा पाता रहता है। इस प्रकार की पीड़ा से अप्रत्यक्ष रूप से उसकी अवचेतन वासनाएं तृप्त होती है।"[4]

नरेश मेहता के खण्ड–काव्य 'संशप की एक रात' में राम पिता की मृत्यु, माताओं का विधवा होना, सीता का अपहरण सवम जिम्मेदार खुद को मानते हैं। देश की दुर्दशा का कारय विभीषण अपने को मानते आत्मग्लानि से पीड़ित है।

जटायु का मरण, अगंद का उपेक्षित होना, हनुमान का पूंछ जलना, उर्मिला का विरह इस सबका कारज राम स्वयं को समझते हैं। लक्ष्मण उनके मन का भाव समझते हुए कहते हैंः–

हनुमत प्रवीर! सुनते हो/प्रभु के निर्णय को!/परितापित वाजी को कहते हैं रघुकुल के दुखों का मैं कारण हूं/सरपू मे लेकर सागर तक जो कुछ भी हुआ/या कि हो रहा है/ उसका मैं/अपयशी निमित हूं।'

समिधा–2, प्र.235–236.

'महाप्रस्थान' में युधिष्टिट आत्मग्लानि से पीड़ित है। युधिष्ठिक स्वर्गारोहण के पथ पर बढते हुए सोच रहे हैंः–

'सब व्यर्थ गया/वह दुर्योधन की जंघा पर करना प्रहार केवल ललाट पर लगा रहा/उस ओर अनैतिमता का/लांछन क्या हुआ दुशासन के/हदय रक्त का पान।/हुआ मन शांत नहीं .../आज भी गरल सटीखा/कष्ठ जल रघा।'

समिधा–2, प्र.277.

युद्ध के बाद हुए विनाश का कारण युधिष्ठिर अपने को मानते हुए कहते हैंः–

'जैसे हमने अपने ही हाथों अपना शवदाह किया।
कैसे श्मशान तब जागा./सब अनाथ, विकलांग हो गये
वंश के वंश/धरा से नष्ट हो गये
जयी.पराजयी सब अकिंचन।'

समिधा–2, प्र.286.

मनोविज्ञानः– मेहता मानवता के कवि हैं। उनके काव्य में मनोवैज्ञानिमता का स्वरूप प्रमट होना साधारण बात है। मेहता ने अपने खण्ड.खण्ड काव्यों के परिप्रेक्ष्य में यह स्पष्ट किया है कि मनुष्य के मन म बहने वाले विचार बाहर की परिस्थितियों से भिन्न होते हैं। वह सोचता कुछ और है मगर जीवन में उसे करना कुछ और ही पड़ जाता है। खण्ड.काव्य 'सशंप की एक रात में घटनाएं तो न के बराबर है लेकिन मन का दृन्दृ, भावनाएं, सशंप आदि विचारों पर ही रचना आधारित है। संशप भाव मन की प्रवृति है और यह भाव सचेत नहीं होता अथति यह अवेचतन मन की क्रियाएं है। 'संशय की एख रात' का कथानक ही राम के मानसिक दृन्द् से सम्बन्धित है। राम का मन दृविधाग्रस्त है, जिसमें वह होने या न होने के दृन्दृ में उलझा हुआ हैः–

'जहां केवल/क्या हो/क्या न हो के प्रश्न ही प्रश्न हैं।
ओ भादपदी दृष्टि!/आद्यन्त भगि उठने दो/सम्भव हैं
तुम्हारे इन देवताओं से/यह संश्याग्नि शान्त हो सके।

समिधा–2, प्र.210.

राम को ना चाहते हुए भी सबका निर्णय स्वीकार करना पड़ता है। इस निर्णय में उनका अपना मन उनका साथ नहीं देता और बार.बार उनसे प्रश्न करता हैः–

'मुझसे मत प्रश्न करो/ओ मेरे विवेक
मुझसे मत प्रश्न करो।

समिधा–2, प्र.256.

'प्रवाद.पर्व' खण्ड–काव्य में मेहता का मनोवैज्ञानिक पक्ष उभर कर सामने आता है। शुरू में ही राम एकान्त में प्रश्नाकुल व्यम्तित्व लेकर प्रकट होते हैंः

'क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध? कि/कर्म/निर्मम कर्म

केवल असंग कर्म करता ही चला जाएँ।/भले ही वह कर्म
धारदार अस्त्र की भांति/न केवल देह/बल्कि
उसमे व्यक्तित्व को/रागत्मिकताओं को भी काट कर रख दें।'

समिधा–2, प्र.359.

दृंदृात्मक भौतिकवादः– घार्म मार्क्स के विचारों को जिस दर्शन के तहत स्वीकारा गया वह है, दृंदृात्मक भौतिकवाद। साहित्य–क्षेत्र में इसी विचारधारा क्यों प्रगतिवाद के नाम से जाना जाता है। समाज का पथार्थ चित्रण, पूंजीपतियों के प्रति विद्रोह भाव, परम्पराओं रीति–रिवाजों के स्थान नवीनता को ग्रहण करना, शोषित के प्रति सहानुभूति दृंदृात्मक भौतिकवाद की प्रवृत्तियां है। नरेश मेहता कार्ल–मार्क्स मे विचारों से प्रभावित थे तथा उन्होनें इसे काल्य में भी उतारा है। 'प्रवाद पर्व' की सीता हो या 'शबरी' उन्होंने समाजिक व्यवास्था पर तीव्र कटाक्ष किए हैः–

'राज्य या न्याय/संबंध नहीं होता/ सत्ता के गौमुय पर बैठकर उसके सारे शक्षित.जलो का/अपने ही अभिषेक के लिए/सुरक्षित रखना यह कौन–सा दर्शन है।

समिधा–2, प्र.370.

प्रवाद पर्व में कवि ने शोषित तथा शोषम वर्ग का वर्णन करते हुए प्रजा के अधिकारों का वर्जन बखूबी किया है/उदारहण देखिएः–

प्रजा का ही यह कर्त्तव्य भी है कि/अधिकार में डूबे राज्य और राजपुरूषों से कहे/आग्रह करे कि/क्या शुभ है, और क्या अशुभ।'

समिधा–2, प्र.372.

अतःश्री नरेश मेहता का दर्शन शास्त्र भारतीय संस्कृति को वहन करने वाली तथा मन भावों को प्रवीत करती हुई एक शिखा के समान है जिसमें से केवल भारतीयता, भारतीय संस्कृति की सौधी महक चारों को सुवासित करती है। भारतीय संस्कृति का उदघोषण करती हुई मेहता की दृष्टि बूंद से सागर तक की यात्रा करती है और अंत में उसी भारतीय संस्कृति रूपी सागर में विलीन हो जाती है। मेहता भारतीय संस्कृति के अगज नेता होने के साथ–साथ पाश्चात्य दर्शन को भी बखूबी उन्होंने अपने काव्य में स्थान दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राजेश कुमारी, नरेश मेहता का काव्य मूल्य और मूल्यांकन {दिल्लीः शब्दसेनु, 2005}, प्र. 202.
2. डा. वीरेन्द्र, छापावादोतक काव्य में आध्यातिमक चेतना उदघुत
3. एम.डी.पाटिल, आधुनिक खण्ड.काव्यों में युग चेतना {कानपुरः अनुल प्रकाशन, 1994}, प्र.139.
4. विमला सिंह, नयी कविता और नरेश मेहता {इलाहाबादः शिल्पी प्रकाशन, 1994}, प्र.168.